पंचम अध्याय

"हिन्दी उपन्यासों में चित्रित दलित-चेतना"

(सारेजल का गांव, धरती धन न अपना, मोरी की ईंट, एकलव्य, आग-पानी आकाश के संदर्भ में)

पंचम अध्याय

"हिन्दी उपन्यासों में चित्रित दलित-चेतना"

(खारे जल का गांव, धरती धन न अपना, मोरी की ईंट, एकलव्य, आग-पानी आकाश के संदर्भ में)

1. चेतना की उत्पत्ति एवं अर्थ।
2. चेतना का निर्माण।
3. दलितों में चेतना निर्मिती के कारण।
4. दलित जागरण का कार्य।
5. जागरण का कार्य :-

   डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर

   महात्मा गांधी

   महात्मा फुले

   महर्षि अण्णा साहेब कर्वे
6. दलित चेतना की आवश्यकता।
7. आलोच्य उपन्यासों में चित्रित दलित चेतना।
8. निष्कर्ष।

पंचम अध्याय

"हिन्दी उपन्यासों में चित्रित दलित चेतना"

(खारे जल का गांव, धरती धन न अपना, मोरी की ईंट, एकलव्य, आग-पानी आकाश के संदर्भ में)

प्रस्तावना :- आधुनिक कालीन साहित्य का स्वरूप विस्तृत रहा हैं। उसमें समाज जीवन, लोकसंस्कृति, राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक पृष्ठभूमि का चित्रण हो रहा है। उसके साथ-साथ आदिम, शोषित, दलित, नारी आदि के जीवन पर भी लिखा जा रहा है। आज सरकारी विकास योजना और समाज सेवी संस्थाओं तथा व्यक्तियों के कार्य के परिणामस्वरूप उपेक्षित, शोषित समाज अपने अधिकार के लिये संघर्षकर रहा है। सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन हो रहा है। दलित साहित्य इसी बात का प्रमाण है। 'दलित साहित्य' मानव समाज को भेदभाव रहित, उच्च और श्रेष्ठ जीवन जीने के लिए एक सामाजिक क्रांति की कामना करता है। दलित साहित्य सामाजिक नव निर्माण का क्रांतिपथ प्रशस्त करने की मनोवृत्ति का परिचायक है। ऐसे साहित्य में चेतित और परिवर्तित दलित जीवन का चित्रण हो रहा है।

दलितों का जीवन आज साहित्य का विषय रहा है। दलित समाज का एक घटक होने के साथ-साथ मानवीय जीवनका एक आयाम भी रहा है। फुले, शाहू, अम्बेडकर जैसे लोगों के कार्य के परिणाम स्वरूप दलितों के जीवन में परिवर्तन हुआ। दलित समाज संगठित होकर अपने अधिकारों की मांग करने लगा। पूँजीवादी, सामंतवादी व्यवस्था के खिलाफ दलित संघर्ष करने लगा। साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में उन्हें वाणी देने का प्रयास किया। दलितों का विद्रोही स्वर रचना के रूप में साहित्य क्षेत्र में दिखाई देने लगा। आलोच्य उपन्यासाकारों ने अपनी रचनाओं में यही विद्रोही स्वर चित्रित किया है। वही विद्रोही स्वर दलितों की चेतना को दर्शाता है। दलित साहित्य में दलित जीवन, उनकी चेतना, उनकी प्रेरणा और उनकी समस्याएं आदि मिलती हैं। प्रस्तुत अध्याय में दलित चेतना पर विचार करेंगे.

1. चेतना की उत्पत्ति एवं अर्थ :-

मानव संघर्षशील प्राणी है। उनका जीवन संघर्ष की गाथा ही है। जीवन में आनेवाले संकटों के साथ, अपने अस्तित्व की रक्षा करते हुए वह जीवन जीता है। सृष्टि में जीव और चेतना का संबंध रहा है। अतः मानवीय जीवन के साथ चेतना रही है। चेतना एक ऐसी प्रवृत्ति है जो जीव को चेतित करती है, उत्तेजित करती है। चेतना का अर्थ जीवन में मिलने वाली प्रेरणा है। वह एक ऐसी शक्ति है, ताकत है जो अन्याय के विरोध में लड़ सकती है। वह एक प्रेरक शक्ति भी है। उसे अस्तित्व की रक्षा एवं विद्रोह करने की समर्थ भावना माना है। चेतना के कारण इन्सान अपने पथ पर, अपने तत्वों को समेटकर चलने का सफल प्रयास करता है। यह चेतना

जीव-जगत में ज्यादातर दिखाई देती है। चेतना अंत: भावधारा को मानवी सहज प्रवृत्ति माना है। उसके कई अर्थ हैं।

मराठी शब्दकोश में चेतना का अर्थ -

1. चेतना, चैतन्य, ज्ञान, होश।
2. प्राणशक्ति, जीवनी शक्ति।
3. पौरूष, जननशक्ति ।
4. आकलन शक्ति, ग्रहण शक्ति । [1]

चेतना का अर्थ :- शुद्धि, शुद्धिवर असणे (जागे होणे), चेतना सावध होणे.[2]

चेतना का अर्थ :- अनुभूति, एहसास ।[3]

अंग्रेजी में चेतना का अर्थ :- Awareness, Consciousness[4]

चेतना सं (स्त्री) - चैतन्य, होश में आना, सावधान होना, सोचना, समझना।[5]

चेतना का अर्थ प्रेरणा, ज्ञात होना, विद्रोह, जागरूकता आदि रहा है। समाज व्यवस्था का और मानवी जीवन का एक अंग चेतना है। चैतन्य एक वैश्विक तत्व है। डॉ.काशीनाथ अम्बलेगे ने कहा है - ''चेतना प्राणी मात्र में निहित वह शक्ति है जो उन्हें निर्जीव और जड़ वस्तुओं से अलग बनाती है और उन्हें चैतन्यमय बनाकर सजीव सिद्ध करती है।''[6] यहाँ जड़ और निर्जीव वस्तुओं में भेद दिखाने का कार्य चेतना करती है। चेतना मनुष्य को प्रभावित और उद्वेलित करती है। ''जो कुछ नहीं उसे पाने की इच्छा चेतना है।''[7] डॉ. देवेश ठाकुर ने चेतना को शक्ति मानकर व्यक्ति को जिवंत रखने वाली प्रेरणा को चेतना माना है।[8] डॉ. मोहनलाल कपूर ने चेतना को मानसिक अपघात माना है, जिसके अंतर्गत सविवेक, सम्प्रेषणीय, जागरूकता, अनुभूति, मनोविज्ञान, संवेदना आदि विशेषताएँ मानी है।[9] यहाँ स्पष्ट है चेतना विकास का केन्द्रबिन्दु है। मानव धर्म की स्थापना करने का वह एक मार्ग है। साहित्य में इसी दृष्टि से चेतना का चित्रण हुआ है।

प्राचीन कालीन समाज व्यवस्था में सत्ता, सम्पत्ति, अधिकार, कुल श्रेष्ठता, वंश श्रेष्ठता के आधार पर दलित, निर्धन, पीड़ित लोगों का शोषण हो रहा है। यह शोषण दमन, अन्याय, अत्याचार, घृणास्पद व्यवहार रहा है। 'दलित', दास, अधिकारहीन व्यक्ति का बोध कराने वाली संज्ञा है। आर्थिक विषमता अज्ञान परंपरा के कारण समाज का एक विशिष्ट वर्ग दास बना, उसे 'दलित' कहा गया। भारतीय समाज व्यवस्था में धार्मिकता और सनातन प्रवृत्ति अधिक रही है। सामाजिकता के आघात सहन करते हुए दलित अपना जीवन जी रहा है। इस व्यवस्था में धनवान लोगों ने, सवर्णों ने निर्बल दलित को परास्त किया। यह शोषण का दमन चक्र आज भी चलता रहा है। पशुतुल्य, अमानवीय, बहिस्कृत जीवन जीनेवाला दलित आज सामाजिक क्रांति की ओर बढ़ रहा है। यही सामाजिक क्रांति साहित्य को बल देती है। साथ-ही-साथ समाज में चेतना जागृति करती

है। आज के साहित्य में दलित चेतना का चित्रण इसी कारण हो रहा है। दलितों के दैन्य के मूल में समाज व्यवस्था ही है। सवर्णों ने दलितों को अछूत, अस्पृश्य मानकर सम्माननीय मानवी समाज से दूर रखा। वही दलित आज शिक्षित बनकर अपने और अस्पृश्यता के बारे में, समाज व्यवस्था के संबंध में वह सोच रहा है।

आजादी आंदोलन में राष्ट्रीय एकता के साथ-ही-साथ सामाजिकता, बंधुता पर बल दिया गया। तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों ने जातीयता, जातीय भेदाभेद को ठुकरा दिया। जातीय भेदाभेद निषेध की प्रक्रिया शुरु हो गई । सिद्ध, नाथ, संत परंपरा से प्रेरणा पाकर यह विचारधारा प्रवाहित हो गई तथा समाज सुधारकों के कार्य से सबल होकर यह चेतना अविरत बहने लगी। दलित जागरण एक राष्ट्रीय कर्म बना। महात्मा गांधीजी ने इसे 'हरिजन' कहकर दलितोद्धार को ईश्वरपूजा माना। गांधी, फुले, अम्बेडकर, शाहू आदि के कार्य से अपनी खोई हुई अस्मिता को पाने वाला दलित चेतित हुआ, जाग उठा। यही चेतना आगे चलकर साहित्य के रूप में बहने लगी।

निष्कर्ष :- यहाँ स्पष्ट है चेतना का संबंध मानवी जीवन से रहा है। चेतना वह प्रवृत्ति है जो सामाजिक क्रांति को बल देती है। मानव को चेतित करके सोचनेके लिए विवश करती है। चेतना के कारण मनुष्य विद्रोही बनकर सक्रिय होता है। मनुष्य को उनके अस्तित्व की पहिचान करा देने वाली शक्ति एवं प्रेरणा चेतना ही है। आज परंपरा से पीड़ित, शोषित, अपमानित दलित अपने अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहा है। इसका कारण उनकी चेतना है। इसी चेतना ने उन्हें लड़ने की प्रेरणा और शक्ति दी। आज समाज व्यवस्था में सामाजिक परिवर्तन के कारण अस्पृश्यता, छुआछूत की भावना कम हो रही है। आज दलितों में विद्रोह का भाव पनप रहा है। यह व्रिदोह एवं चेतना आत्मरक्षा के लिये, अस्तित्व के लिए, सकारात्मक काम के लिए हो तब तक वह उपयुक्त है, परंतु वह जब हिंसात्मक रुप लेगी, उसमें बदले की भावना होगी, तब वह चेतना समाज के लिए हानिकारक होगी। इसलिए इस विद्रोह एवं चेतना को सही दिशा मिलना अनिवार्य है। मतलब और मजहब का रूप लेकर यदि विद्रोह बनेगा तो सामाजिक परिवर्तन की अपेक्षा साम्प्रदायिक्ता की दग्धता का कारण बनेगी ऐसा लगता है।

2. चेतना का निर्माण :-

दलितों का जीवन चिंतन और साहित्य का विषय रहा है। आज के साहित्य में इसे विशेष स्थान मिला है। प्रेमचंद, निराला, भगवतीचरण वर्मा, रांगेय राघव, भगवतीप्रसाद शुक्ल, जगदीशचंद्र, मदन दीक्षित, अमृतलाल नागर, चंद्रमोहन प्रधान, रामधारी सिंह दिवाकर आदि जैसे अनेक रचनाकारों ने अपली कलम से दलितों का जीवन चित्रित किया है। आज धीरे-धीरे दलितों में चेतना एवं अपने अधिकार की रक्षा का, अस्मिता का भाव बढ़ने लगा। यहाँ स्पष्ट है कि आज दलित जागृत हो रहा है। जातीयता का विरोध करके नव मानवता का निर्माण कराने का महत्वपूर्ण कार्य साहित्य के माध्यम से हो रहा है। अत: साहित्य दलित चेतना का पक्षधर

है। सरकारी विकास योजना, उदारनीति, संविधान की सहायता, समाजसेवकों और सेवाभावी व्यक्तियों के कार्य का परिणाम, शिक्षा प्रसार आदि कई कारणों से दलित समाज चेतित हो रहा है।

आज के उपन्यास मानव समाज के संघर्ष को गहरी संवेदना से प्रस्तुत करने में सक्षम हैं। मानव समाज एवं जीवन की करूण स्थितियों को चित्रित करने में सफल है। हिन्दी साहित्यकारों ने लोकसंस्कृति और लोकजीवन को स्थान देकर जनवादी साहित्य का निर्माण किया। इस सहित्य को प्रगतिवादी चेतना माना जाता है। दलित सहित्य भी इसी प्रकार का है। ''दलित साहित्य व्यक्ति को भीरू, अकर्मण्य और धर्मांध के स्थान पर जुझारू, संघर्षशील और कर्तव्यशील बनाता है। उनमें स्वाभिमान, आत्मगौरव जगाकर आडंबरों को दूर भगाता है।''[10] इससे स्पष्ट साहित्य समाज में चेतना निर्माण करता है।

हिंदू संस्कृति धर्म ग्रंथ पर आधारित है, तो धर्मगुरू समाज व्यवस्था के कर्ता बने। चार्तुवर्ण्य व्यवस्था में दलितों को शूद्र, अपमानित, लांछित माना गया। आजादी के साथ परिवर्तन का कार्य शुरु हुआ। जातीय व्यवस्था का विरोध करने का कार्य राजनीतिक नेता, समाज सुधारक और साहित्यकारों ने किया। परिणामत: चेतना का निर्माण हुआ। अस्तित्व की रक्षा के लिए जो विद्रोह किया गया उसे चेतना के अर्थ में लिया गया। डॉ. नामवर सिंहजी ने कहा है - ''पिछले दशक में दलितों, स्त्रियों एवं समाज के विभिन्न तबकों के रचनाकारों ने परंपरागत ढाँचे को हिलाने-डुलाने कुछ तोड़ने और नया जोड़ने वाले उपन्यास लिखे।''[11] यहाँ स्पष्ट है परंपरा से हटकर अछूतों, उपेक्षितों का जीवन-चित्रित होने लगा। इसे साहित्यिक क्रांति माना गया। आदिकालीन सिद्ध साहित्य, नाथ साहित्य, कबीर, रैदास की रचनाएं जातीयता का विरोध कर रही हैं। राहुल सांकृत्यायनजी का 'अर्जुन' कहता है - ''अब मैं समझता हूँ कि अपनी जाति के टुकड़े-टुकड़े करके हमने स्वयं अपने आपको अपात्र और लांछन का पात्र बनाया है।''[12] यहाँ स्पष्ट है पात्रों के माध्यम से साहित्यकारों ने अपने विचार स्पष्ट किये।

दलितों में चेतना निर्मिती के कारण :-

दलित साहित्य दलित चेतना का प्रतीक है। दलितों में चेतना निर्मिती के मूल में समाज सुधारकों का कार्य और साहित्य है। साहित्य के कारण दलितों की व्यथा स्पष्ट होने लगी। आनंद यादव का मानना है - ''जब तक दलित समाज शिक्षित नहीं था, संगठित नहीं था तब तक उन्हें शोषण का ज्ञान नहीं था और तब तक दलित साहित्य भी निर्माण नहीं हुआ अर्थात जब दलित शिक्षित हुआ तभी दलित साहित्य का निर्माण हुआ।''[13] दलित चेतना का केंद्रबिन्दु मानव की समानता है। जातीयविहीन समाज की स्थापना करना, मानव धर्म की प्रतिष्ठा करना, उनका उद्देश्य है। दलित चेतना के दो स्तर हैं, प्रथम -दलित साहित्य विशुद्ध मानवता की मांग करता है और द्वितीय - दलित जीवन की भयावह यातनाओं का खुला और निर्मम चित्रण करता है।''[14] यहाँ

स्पष्ट है साहित्यकारों ने साहित्य कृतियों के द्वारा दलितों में चेतना जागृति की। दलितों की स्थिति को उजागर किया। जातीय भेदाभेद का विरोध करके समानता, समता और एकता की स्थापना करने की कोशिश की। ''शिक्षा, संविधान की सहायता, सरकारी प्रयास, राजनीतिक नेता और सामाजिक संस्थाओं के कार्य के कारण दलितों में चेतना का संचार हुआ।''[15] यहाँ स्पष्ट है अब धीरे-धीरे परंपरागत से जीवन जीने वाला दलित समाज चेतित हो रहा है। संगठन शक्ति के बल पर विद्रोह कर रहा है।

संगठन एक ऐसी शक्ति है जो दुर्बलों को भी सबल बनाती है। विश्व का इतिहास इसका साक्षी है कि संगठन के बलपर लोग जेता-विजेता बने। आज दलितों में भी संगठन हो रहा है। परिणामत: वे चेतित हो रहे हैं। उनके चेतना के मूल में उनका संगठन है। डॉ. रघुबीर सिंह कहते हैं - ''किसी भी तरह के अन्याय का प्रतिकार करने के लिए संगठन, सहयोग पहली आवश्यकता है। अछूतों की संगठन शक्ति भी उन्हें सत्ता में भागीदारी दे सकती है।''[16] सत्ता, पद, अधिकार की प्राप्ति संगठन के बल पर हो सकतीहै। इसका ज्ञान अब दलितों को हो चुका है। इसी कारण भी दलितों में चेतना निर्मिती हो रही है।

नव जागरण काल में समाज सुधार रूढ़ियों का विरोध, नारी की प्रगति का समर्थन, देशवासियों पर होने वाले अत्याचारों के प्रति विद्रोह, शोषित-पीड़ित, दीन-हीन दलित वर्ग के लिए अधिकारों की मांग, उस वर्ग के प्रति गहरी सहानुभूति आदि भाव दिखाई देते हैं। नवजागरण काल में साहित्य में साहित्य ने सिर्फ राजनीतिक आंदोलन को ही दिशा नहीं दी, बल्कि सामाजिक एकता को भी बढ़ावा दिया। सामाजिक समस्याओं को उजागर किया। सामंतवाद,प्राचीन रूढ़ि, परंपरा, धर्म का विकृत रूप आदि को चुनौती देने का तथा समाज सुधार का कार्य भारतेन्दुजी ने किया। इसके साथ ही धार्मिक कट्टरता के स्थान पर धार्मिक उदारता का प्रतिपादन करते हुए परोपकार एवं मानव प्रेम का संदेश दिया। इसी कारण राजनीतिक और साहित्यिक चेतना को नई दिशा मिली। देश के दलित वर्ग की ओर भी उनका ध्यान आकर्षित हुआ। इस प्रकार सही अर्थों में प्रथम बार वर्णव्यवस्था एवं अस्पृश्यता जैसी कुरीतियों का विरोध, दलितों, किसानों, मजदूरों एवं नौकरों की असहायता, आवास की समस्या, तथा नारी की दुर्दशा आदि विषयों पर बड़ी सहानुभूति के साथ रचनाएं लिखी गयी। इसमें दलितों की असहाय स्थिति में परिवर्तन लाकर उन्हें मानवीय अधिकार प्रदान करने की कामना भी की गई। इस युग की दृष्टि व्यापक एवं मानव कल्याण की भावना से परिपूर्ण थी।

मानवतावादी विचारधारा से प्रेरित होकर ईश्वर के स्थान पर मानव को ही अध्ययन, मनन एवं चिंतन का विषय बनाकर मानव महत्ता का उद्घोष किया गया। भारतीय दलित वर्ग के उत्थान के लिए मार्क्स के विचारा एवं सिद्धांत उपयुक्त सिद्ध होते हैं। मार्क्स प्रणित 'सर्वहारा वर्ग' और 'दलित वर्ग' में बहुत समानता है। इसलिए हम सर्वहारा वर्ग एवं दलित वर्ग में पाये जाने वाले साम्य और भेद को देखते हैं। मार्क्स प्रणित

सर्वहारा वर्ग का विवेचन करते समय कई जगह 'सर्वहारा' शब्द के बदले 'दलित' शब्द का भी प्रयोग किया है। सम्पन्न मनुष्य ने अशांति और असंतोष प्रकट न होने देने के लिए जहाँ अपनी शक्ति से काम लिया, वहाँ उसने अपनी बनाई व्यवस्था की रक्षा के लिए सिद्धान्त भी बनाये। उसने निर्बलों और साधनहीन लोगों को संतोष की शिक्षा दी। परलोक में दंड का भय दिखाया और विषमता को बढ़ने से रोकने के लिए दलितों की अवस्था को सहृदय बनाने के लिये उसने बलवानों और सम्पन्न लोगों को दया, सहानुभूति और त्याग का भी उपदेश दिया। इन दो शब्दों में पर्याप्त भेद भी हैं। 'दलित' की व्याप्ति अधिक है तो 'सर्वहारा' की सीमित है। 'दलित' के अंतर्गत सामाजिक, धार्मिक एवं राजनीतिक शोषण का अंतर्भाव होता है, तो 'सर्वहारा' केवल आर्थिक शोषण तक ही सीमित है। प्रत्येक दलित व्यक्ति सर्वहारा वर्ग के अंतर्गत आ सकता है। लेकिन प्रत्येक सर्वहारा को दलित कहने के लिए हम बाध्य नहीं हो सकते। इसका कारण यह है कि सर्वहारा वर्ग केवल मजदूरों तक ही सीमित है। भारत में अंग्रेजी शासन काल में आधुनिक उद्योगधंधों, यातायात के आधुनिक साधनों और बागानों की स्थापना हुई। जिसके कारण आधुनिक मजदूर वर्ग का जन्म हुआ। आधुनिक कारखानों, खान-उद्योगों, आवागमन के साधनों आदि में वृद्धि हुई। ''दास प्रथा के काल और सामंत युग में साम्यवाद की पुकारका उद्देश्य था। उस समय की शासन व्यवस्था को दृढ़ करना और दलित वर्ग को अपने हित के लिये जीवित बनाये रखना।''[17] इससे स्पष्ट हो जाता है कि सर्वहारा शब्द की सीमा में आर्थिक विषमता का शिकार वर्ग आ जाता है तो दलित वर्ग आर्थिक विषमता एवं शोषण का शिकार रहा है।

मराठी में दलित साहित्य की संकल्पना मराठी साहित्य के लिए एक नई उपलब्धि है। जिसमें दलितों की वेदना, पीड़ा व्यक्त हुई है और दलित शक्ति अपने अस्तित्व तथा उद्धारार्थ क्रांति का पथ चुनती रही है। परंतु हिन्दी साहित्य में 'दलित साहित्य' ऐसा कोई अलग साहित्य प्रकार नहीं है। दलित आंदोलन ऐसा कोई नया आंदोलन नहीं है। परंतु उसमें दलित का विवेचन अवश्य हुआ है। हिन्दी साहित्य के आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक साहित्य में दलित जीवन, उनकी हालत, पीड़ा, व्यथा आदि का चित्रण दलित आंदोलन के रूप में नहीं हुआ। आदिकालीन कुछ सिद्ध और भक्तिकालीन रैदास तथा कृष्णदास दलित थे। परंतु उनके साहित्य पर आंदोलनकारी तथा दलित- सहित्य का आरोप करना उनके प्रति अन्याय होगा, क्योंकि उनका दृष्टिकोण जनजागरण, समाज जागृति का था दलित साहित्य निर्माण का नहीं। दलितेतर साहित्यिकों के द्वारा भी हिन्दी में यत्र-तत्र, फुटकल रूप में दलित चित्रण हुआ है। दलितों से संबंधित साहित्य को दलित साहित्य कहा जा सकता है।

सामाजिक दृष्टि से जनता अन्याय, शोषण, दरिद्रता से पीड़ित थी। दलित जातियाँ उच्च वर्णों के प्रभाव से दबी हुई थी। उनका जीवन उपेक्षित और बहिस्कृत था। भक्ति के द्वारा इस हालत से उनका उद्धार

हुआ। ईश्वरकी विशाल दृष्टि में न कोई ऊँचा है, न कोई नीचा, न कोई बड़ा है और न कोई छोटा। ईश्वर हर पद-दलित का उद्धारक है। वह सबका है और सब उसके हैं, आदि संत वचनों से प्रभावित समाज परिवर्तन की ओर बढ़ने लगा।

स्वाधीनता की प्राप्ति ने ग्रामचेतना को बल दिया। स्वतंत्रता से ग्रामीणों में बड़ी आशाएं जाग उठीं। आजादी के कारण सपने सजाने वाले लोगों को सुनहरा भारत देखना था। कुटीर उद्योग बने, कृषि में नया तंत्र स्थापित हुआ, कारखानों का निर्माण हुआ, साथ-ही-साथ भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, जातीयता से प्रभावित राजनीति को भी सहना पड़ा। आजादी के लिये सभी धर्म-जाति, वर्ग के लोगों ने योगदान दिया। भाट-शाहीर काव्य गाते रहें। साहित्यकारों ने रचनाएं लिखी, परंतु आज उनके सपने अधूरे रहे हैं। वर्तमान समाज में बदलते हुए जनजीवन और उनके जीवन मूल्यों ने मनुष्य को जटिल बना दिया हैं।

हिन्दी उपन्यासों में ग्रामों की बदलती हुई स्थितियों, उभरते नये मूल्य बोधों, परिवर्तित संदर्भों, टूटते-बनते नये संबंध, नई मानसिकता, नये चरित्र विकास की आवश्यकता है क्योंकि गांवों में वर्ग संघर्ष पल रहा है तथा राजनीतिक चेतना की समझदारी उनमें नई मानसिकता का रूपायन कर रही है। दलितों की शोषित-पीड़ित अवस्था, तथा उनपर किये जाने वाले जुल्म, अत्याचारों के कारण उनमें जो भाव उत्पन्न हुआ, जो नया विचार सामने आया, उसी को उपन्यासकार ने चेतना के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। दलितों ने जो आंदोलन चलाये उसमें उनके मन का दाह निकला। उन्हें न्याय के रूप में समाज में स्थान मिला। इसीकारण चेतना को बल मिला।

निष्कर्ष :- स्पष्ट है कि समाज सुधारकों का कार्य, आजादी का आंदोलन, राजनीतिक नेताओं का कार्य, आजादी की प्राप्ति, सरकार की नई नीति, विकास योजना, दलित-संगठन, दलितों में शिक्षा प्रसार, संतों और भक्तों द्वारा जनजागरण, साहित्यकारों का कार्य, प्रसार माध्यमों का योगदान, प्रगतिवादी विचारधारा, मार्क्स के विचारों का प्रभाव, डाक्टर अम्बेडकरजी का कार्य आदि कई ऐसे कारण हैं जिन्होंने दलितों में चेतना का निर्माण किया। दलित चेतना को बल दिया। दलित संगठित बनकर,चेतना से प्रेरित होकर कार्य करेंगे तो दलितों का जीवन विकसित एवं सम्पन्न होगा ऐसा लगता है। साथ-ही-साथ परंपरा से प्रताड़ित, उपेक्षित दलित युवा शिक्षित बनकर अपनी अस्मिता की रक्षा करने के लिए आगे बढ़ रहा है। यह दलित चेतना का भी एक महत्वपूर्ण कारण लगता है।

दलित जागरण का कार्य :-

मानवता मानव धर्म का सार है। दया, बंधुता, प्रेम, क्षमा, सहयोग, मानव धर्म की नींव है। दूसरों पर दया दिखाना, बेसहारा को सहारा देना मानवी जीवन की बुनियाद है। यह भूमि साधू, संत, महंत,

मसीहा, सुधारक और समाज सेवक की रही है। उनके कार्य और वाणी से यह भूमि पवित्र बनी है। परिणामत: उपेक्षित, पीड़ित, विधवा, दलित, अछूत, अपाहिज आदि की सहायता करने की कोशिश मानव कर रहा है। प्रेम का महत्व बताने वाले महात्मा गांधी, येशु, सेवा की महिमा बताने वाली मदर तेरेसा, सामाजिक जीवन में परिवर्तन लाने वाले बाबा आमटे का कार्य आज भी लोगों को प्रेरणा देता है। परिणामत: सामाजिक क्रांति, संस्कृति परिवर्तन को बल मिला। इसी प्रक्रिया में समाज से बहिस्कृत दलित जाग उठा।

स्वातंत्र्यपूर्व काल में अज्ञान, अंधविश्वास के कारण छुआछूत की भावना अधिक प्रभावी थी। दलितों को मंदिर, पाठशाला, सार्वजनिक स्थल एवं समारोह पर प्रवेश निषिद्ध था। यहाँ तक रास्ते पर चलना भी मना था। पशु के समान जीवन जीने वाला दलित मुक्ति के लिए तड़प रहा था। आम्बेडकर, फुले, शाहू आदि जैसे लोगों के रूप में उन्हें मसीहा मिला। परिणामत: दलितों में चेतना जागृति हुआी। जातीयता, उच्च-नीचता का विरोध करके सामाजिक एकता का नारा बुलन्द करने की कोशिश की गई। आम्बेडकर का धर्म परिवर्तन, कर्मवीर भाऊराव का शिक्षा प्रसार, शाहू और फुले का समता का विचार दलितों में चेतना का कारण बना। आजादी के बाद भारतीय संविधान में आरक्षण के नाम पर दलितों को सुविधाएँ उपलब्ध कराई। संसद, नौकरी आदि में आरक्षित जगह रखकर दलितों का विकास करने की कोशिश की। कानून के आगे सभी समान हैं तथा कमजोर वर्गों के लिए विशेष छूट देने की बात कही गई। केन्द्र सरकार और राज्य सरकारों ने दलितोद्धार को प्रोत्साहन देने के लिए समय-समय पर अनेक कानून पारित किये। पिछड़ी हुई जातियों की आर्थिक कमजोरी देखकर बच्चों के लिये मुक्त शिक्षा व्यवस्था के साथ-साथ छात्रवृत्तियाँ देने का और छात्रावास खोलने का प्रबंध किया।

दलितों में शिक्षा प्रसार के साथ-साथ उनका आर्थिक स्तर भी विकसित करने की कोशिश की गई। सभी समस्याओं की जड़ अर्थ है। इसलिए सरकार ने दलितों का महाजन, जमींदार, साहूकार आदि द्वारा होने वाला शोषण समाप्त करने के लिए दलितों को कर्ज की सुविधा उपलब्ध कराई। राष्ट्रीयकृत बैंक के द्वारा कम ब्याज पर ऋण की सुविधा उपलब्ध कराकर दलितों में आत्मनिर्भरता लाने की कोशिश की। संसद या विधान सभा में, पंचायतों में दलितों के लिए आरक्षण रखकर उनमें राजनीतिक चेतना जगाने की कोशिश की। परिणामत: आज का दलित राजनीति में सक्रिय हो रहा है, परंतु आधुनिक काल में जाति और राजनीति का घिनौना संबंध दिखाई दे रहा है। ऐसी गंदी राजनीति दलितों के शोषण का कारण बनी। दलितों के विकास के लिए कानून के साथ-साथ समाजसेवी संस्था और व्यक्तियों ने कार्य किया है। दलितों में क्रांति की भावना जगाकर उन्हें क्रांति के लिए उद्दिप्त करना ही दलितोद्धार है। आज जाति-पांति तथा धर्म बंधन तोड़ने के प्रयास में मनुष्य स्वयं ही इन बंधनों में बंधा जा रहा है ऐसा लगता है।

जागरण का कार्य :-

दलित जागरण का कार्य एक राष्ट्रीय कार्य बन गया। सभी लोगों ने इसमें अपना योगदान दिया। जब तक सामाजिक समता, समानता,एकता नहीं बनती तब तक राष्ट्रीय एकता और देश की आजादी की रक्षा एक सपना रहेगा। जातीयता की दीवारों गिराकर मानव एकता का भाव बढ़ाना देश के विकास की एक महत्वपूर्ण कड़ी ने कार्य किया। उनके कार्य को यहाँ देखना अनिवार्य है।

डॉ. बाबासाहेब आम्बेडकर :-

भारत में दलितों की हीन अवस्था और उनके उद्धार का कार्य युग प्रवाह के साथ हुआ और आज भी हो रहा है। उसमें डॉ.अम्बेडकर, महात्मा गांधी, महात्मा फुले और कर्वे सामिल थे। डॉ.अम्बेडकर का काल सन 1891 ई. से 1956 ई. तक रहा। उनका जीवन कार्य दलितों की खातिर समर्पणशील और त्यागी व्यक्तित्व का प्रतिब्ंिब है जिसमें अनावश्यक, अन्यायी, झूठी प्राचीन व्यवस्था के प्रति विद्रोह का स्वर उभरा हुआ है। इस महान विभूति के जन्म से न केवल दलितों को बल्कि मानवता को मान, प्रतिष्ठा और चेतना का स्वरूप प्राप्त हुआ। समता और स्वातंत्र्य के प्रतिपादक तथा दलितों के भाग्यविधाता के रूप में आम्बेडकर का व्यक्तित्व रहा है।

डॉ. अम्बेडकर ने प्रथम गोलमेज परिषद में भारतीय दलितों का प्रतिनिधित्व किया और दलितों की मांगे भी पेश की। द्वितीय गोलमेज परिषद में भी उन्होंने अपनी कुछ शेष मांगे भी पेश की। कालाराम मंदिर प्रवेश सत्याग्रह, महाड सत्याग्रह, मुखेड़ ग्राम का सत्याग्रह, रामकुंड प्रवेश सत्याग्रह, रामरथ उत्सव विषयक सत्याग्रह आदि के रूढ़िप्रिय हिन्दू समाज की नींव हिला दी। दलितों की उपेक्षित, बहिस्कृत जिन्दगी का नग्न यथार्त्र रूप दिखाकर उनके लिये समान हक्कों की मांग की। उच्च वर्णीय सनातनी हिन्दू मन को दलितों की पीड़ा, दर्दभरी पशुवत हालत पर विचार करके ऊँच नीच भेदभाव, जाति-पांति की भेदनीति का त्याग करने के लिए उत्तेजित किया। जो धर्म न्याय नहीं देता उसे त्याग देने का विचार शुरू हुआ। परिणामत: सन 1935 ई. में उन्होंने अपने धर्मांतर की ऐतिहासिक घोषणा की। हिन्दू धर्म के खिलाफ अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए डॉ.अम्बेडकर जी ने कहा - ''मैं हिन्दू के रूप में जन्मा हूँ, पर हिन्दू के रूप में मरूँगा नहीं।''[18] उनका यह कथन आत्मचेतना को दर्शाता है। अम्बेडकरजी की यह स्पष्ट मान्यता थी कि, धर्म का कार्य समाज को चलाने का है एवं उसे सम्यक दृष्टि से देखने का है। बचपन से लेकर मृत्यु तक समाज के भेदभाव को झेलनेवाले इस महान विचारक के दिमाग में हिन्दू धर्म के प्रति घृणा समय के साथ बढ़ती ही गई। धर्म परिवर्तन के दूसरे ही दिन यानी 15 अक्टूबर को नागपुर में 'नागपुर नगरपरिषद' द्वारा बाबासाहब का 'नागरिक अभिनंदन' किया गया। अभिनंदन पत्र में उनको एक महान सामाजिक कार्यकर्ता, उद्धारक, दार्शनिक एवं संविधान विज्ञ की उपाधि प्रदान की गई। उनसे प्रेरित होकर चंडा नामक स्थान पर लाखों लोगों ने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया। वे इस मौकेपर उपस्थित रहे।

उन्होंने लोगों को परिवर्तन की दिशा में अग्रसर किया। नवंबर में उनको 'विश्व बौद्ध सभा' में भाग लेने हेतु नेपाल आमंत्रित किया गया। जिस कार्यक्रम का शुभारंभ वहाँ के राजा महेन्द्र ने किया। उसकी अध्यक्षा करने के लिये इस महान विचारक को आमंत्रित किया गया। यह बात प्रमाणित करती है कि कम से कम बौद्ध धर्म छूत-अछूत, और ऊँच-नीच के भेदभाव से परे होकर विचारकों, विद्वानों एवं दार्शनिकों का आदर करता है।

आजादी के पश्चात भारत सरकार में पडित नेहरू के, मंत्रिपरिषद के सदस्य के नाते उन्होंने सफलतापूर्वक जिम्मेदारी निभाई। दलित नेता, दलितोद्धारक के रूप में उन्होंने अपना योगदान दिया। दलितों का संगठन, दलित चेतना, आत्माभिमान, संविधान में स्थान, आरक्षण आदि क्षेत्रों में उन्होंने महत कार्य किया। परिणामत: वे आज दलितों के देवता बन गये हैं।

महात्मा गांधी :-

महात्मा गांधीजी ने राष्ट्र की समुन्नत प्रगति के प्रयत्न मानवी धरातल पर किये। जिसमें वे 'राष्ट्रपिता' के पद तक पहुँच गये। उनका हर प्रयत्न समाज सुधार और नवराष्ट्र निर्माण के लिये था। अपने राष्ट्रधर्म के प्रति श्रद्धा और राष्ट्रीय चरित्र को ठीक करने के लिये उन्होंने रचनात्मक कार्यक्रम बनाया था क्योंकि उनके विचारों में समुन्नत, बलवान, स्वतंत्र भारत का चित्र था जिसकी पूर्ति के लिये उन्होंने सुधार योजनाएं शुरू की । इनमें से दलितोद्धार एक महत्वपूर्ण सुधार योजना थी।

महात्मा गांधी ने अस्पृश्यता को हटाकर दलितों को न्याय, प्रतिष्ठा प्रदान करने के लिये कार्य किया। शांति और दया से लोगों का हृदय परिवर्तन करना यही उनका मार्ग था। 25 मई सन् 1915 ई. में. महात्मा गांधी ने अहमदाबाद में सत्याग्रहाश्रम की स्थापना की, जिसकी विशेषता सामुदायिक धार्मिक जीवन थी। उन्होंने अस्पृश्यता, छुआछूत की समस्या को मानवीयता की दृष्टि से देखा। अत: इसे हटाने के लिये सवर्णों को सहयोग का आवाहन किया। उन्होंने कहा कि - ''हम हमारे पूर्वजों ने सदियों से अस्पृश्यों के साथ जो भारी अन्याय किया है, उसका देर से ही सही, पर कुछ तो प्रायश्चित कर सकेंगे।'' महात्मा गांधीने दलितों की कमजोरी देखकर उन्हें संघर्ष से दूर रखा और सवर्ण हिन्दुओं को दलितोद्धार के लिए समर्पण की भावना का प्रतिपादन किया। गांधीजीने कहा - ''अन्याय, अत्याचार और हिंसा के सामने मत झुको।''

दलितोद्धार के कार्य में अंग्रेजों के 'जाति-निर्णय' को असाधारण महत्व प्राप्त हुआ क्योंकि उसके विरोध में किये महात्मा गांधी के अनशन से अंग्रेजों को दलितों के लिये स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र देने का निर्णय बदलना पड़ा। दलितों के लिए अलग चुनाव क्षेत्र देने के अंग्रेजों के 'जातिनिर्णय के विरुद्ध उन्होंने आमरण अनशन किया। 'अग्नि परीक्षा' का यह प्रथम दिन 'अनशन दिन' के रूप में पूरे हिन्दुस्तान में मनाया गया। 'हरिजन सेवक संघ'

की स्थापना करके दलितोद्धार एवं दलित जागरण का कार्य जारी रखा। इसके लिए गांधी ने स्वयं को समर्पित किया। उन्होंने 'हरिजन' नाम का साप्ताहिक 11 फरवरी, 1930 ई. में शुरू किया। दलितों के लिये विद्यालय, छात्रावास, उपहारगृह, मंदिर, पनघट भी खुले किये। आगे इस कार्य को सुचारु रुप देने के लिए गांधीजी ने 'हरिजन सेवक संघ' की स्थापना की।

यहाँ स्पष्ट है कि आजादी के आन्दोलन के साथ गांधीजी ने सामाजिक परिवर्तन के लिए भी जन आंदोलन चलाये। दलितों के जीवन में सामाजिक बदलाव लाने की कोशिश की। पत्र-पत्रिका, संगोष्ठी, जनसंपर्क आदि के सहारे यह कार्य किया। मानव की पूजा ही ईश्वर की पूजा है यह सिद्धांत स्पष्ट किया। परिणामत: आजादी का आन्दोलन प्रबल हुआ। धीरे-धीरे दलितों में चेतना जागृत हुई। राजनीति और समाज सुधार का दुहरा कार्य उन्होंने किया।

महात्मा फुले :-

महात्मा फुले समाज सुधारक और राष्ट्रभक्त हैं। महाराष्ट्र में सामाजिक सुधारणा में महात्मा फुले का योगदान एवं स्थान महत्वपूर्ण है। उन्होंने किसान, नारी, दलित आदि के लिए कार्य किया। अज्ञान, अशिक्षा के कारण जो क्षति हुई उस पर उन्होंने प्रकाश डाला है। शिक्षा, अनिवार्य शिक्षा, नारी शिक्षा के लिए विशेष प्रयास किया है। जिसके कारण उपेक्षित, प्रताड़ित, दलित एवं नारी भी शिक्षित बनी। परिणामत: दलित चेतित बना। दलित का उद्धार हुआ।

महात्मा फुले जी की लड़ाई केवल सामाजिक अत्याचार के विरुद्ध नहीं थी। सत्तांतर हो या न हो स्वतंत्रता, समता पर खड़ा होने वाला समाज का निर्माण हो यही उनकी धारणा थी। सन 1818 ई. में पेशवाई समाप्त होने पर उसके स्थान पर अंग्रेजों का शासन शुरू हुआ। इसी समय ब्राह्मण, भट आदि ने जन सामान्य को देव-धर्म और अपने मतलबी ग्रंथों के आधार पर लूटते थे। अपने धार्मिक ग्रंथों मेंउन्होंने अविश्वसनीय दंत कथाओं से लेकर मनगढ़ंत कथाओं का समावेश कर दिया। इसे महात्मा फुलेने अपवित्र ग्रंथ घोषित किया। जन सामान्य की हालात अत्यन्त बुरी थी, तो दलितों की दुर्दशा चिंतनीय, सोचनीय थी। महात्मा फुले ने ऐसे घृणित दलित जीवन को देखा और हजारों शूद्रातिशूद्रों को संगठित करके सामाजिक विषमता के विरुद्ध विद्रोह प्रारंभ किया।

महात्मा जोतिराव फुले ने अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए सन 1873 ई. में 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना की। जाति भेद, धर्म-भेद जैसी नीति पर हमले किये और इस प्रकार हिन्दू धर्म में प्रचलित वेद, श्रुति, स्मृति पुरणोक्त अनेक सिद्धान्तों और मतों को चुनौती दी। शब्दप्रमाण से विचार प्रमाण और बुद्धि प्रमाण को उन्होंने अधिक मौलिक मान लिया। सत्यशोधक आंदोलन ने दीन-दलितों का पक्ष लेकर उनके हित की रक्षा

की। इस दृष्टि से दलितोद्धार के इतिहास में आंदोलन का स्थान ऊँचा माना जाएगा। यह आंदोलन शोषितों, दुर्बलों की विद्रोहमयी चेतना की अभिव्यंजना थी। सत्यशोधक आंदोलन ने सामाजिक दासता में अनेक बरसों तक दबे हुए दलितों को प्रतिकार की आवाज दी। 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना करने के पूर्व महात्मा फुले ने दलितोद्धार के कार्य का प्रारंभ किया था। इसी तरह दलितोद्धार तथा दलित जागरण के लिए सामाजिक समता के लिए,सामाजिक दासता के विरोध में आंदोलन शुरू कर के दीन-दुर्बलों को जागृत किया। शिक्षा व्यवस्था एवं शिक्षा प्रसार पर भी बल दिया। महात्मा फुले का जीवन कार्य दलितोद्धार और समाज परिवर्तन की दिशा में उठाया गया एक ठोस कदम था।

महर्षि अण्णासाहब कर्वे :-

समाज सुधारक के रूप में महर्षि कर्वेजी ने सुधार का कार्य किया। उन्होंने सुधार कार्य में कमजोर, ग्रामीण और जातिव्यवस्था के भक्ष्य बने परावलंबी लोगों के उद्धार का प्रयास किया। प्रचलित रूढ़ियों की धारा के विरुद्ध उन्होंने लोगों को प्रेरित करके नवीनता के प्रचारार्थ आवश्यक संस्थाओं की स्थापना की। महिलाओं और ग्रामीणों का स्तर सुधारने के लिए शिक्षा की व्यवस्था की। इस भांति महर्षि कर्वे सामाजिक समता के प्रतिपादक थे। किंतु यह समता तभी सार्थक हो सकेगी जब जाति पद्धति को सामर्थ्यपूर्वक निष्प्रभ बना दिया जाएगा। इसलिए उन्होंने 'समता संघ' शुरू करके 'जाति उच्छेदन' संस्था की स्थापना की। तत्पश्चात उन्होंने 'सामाजिक समता' का समर्थन करते हुए मासिक बुलेटिन प्रकाशित करना शुरु किया। सामाजिक समता के विचार को दलित कल्याण का एक उपाय के रूप में महर्षि कर्वे नेप्रस्तुत किया था। उन्होंने जाति व्यवस्था को जड़ से नष्ट करने का कार्य किया। वे कहते थे - ''मैं अत्यन्त सुखी हूँ। मुझे जो सम्भव था वह सारा मैंने किया। केवल विधवाओं के लिये, नारी शिक्षा के लिए, दलितों के लिए जितना संभव था उतना प्रयत्न करता रहा।'' उन्होंने 'जहाँ चाह, वहाँ राह' यही नया मार्ग ढूँढ निकाला। वे जीवन के नये मार्ग खोजते रहे। इसलिए उन्होंने अपने जीवन में आनंद की अनुभूति की। समाज सुधार का कार्य आंतरिकता एवं मन की गहराई से किया। दलितों में चेतना जगाकर जागरण का कार्य किया।

यहाँ स्पष्ट है कि स्वातंत्र्यपूर्व काल से लेकर आज तक व्यक्तिगत और शासकीय स्तर पर दलितोद्धार और दलित जागरण के प्रयत्नों के फलस्वरूप अस्पृश्यता की तीव्रता कम होकर दलित अपने अधिकार,समता, मुक्ति के लिये सजग बनते जा रहे हैं। यहाँ डाक्टर अम्बेडकर, महात्मा गांधी, महात्मा फुले, महर्षि कर्वे आदि के कार्य का संक्षिप्त उल्लेख किया है। इनके साथ-ही-साथ वि. रा. शिंदे, शाहू महाराज, सावरकर, गोपाल कृष्ण गोखले, सयाजीराव गायकवाड, लोकहितवादी आदि ने भी अपना योगदान दिया है। शिक्षा, समानता, संविधान, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक आदि स्तर पर कार्य शुरू हुआ। परिणामस्वरूप दलितों में चेतना का

संचार हुआ। अपने अस्तित्व के लिए दलित विद्रोही बना। वही विद्रोही चेतना का प्रतीक बना। साहित्यकारों ने भी धार्मिक कट्टरता के स्थान पर धार्मिक उदारता का प्रतिपादन किया और सामाजिक समता का महत्व स्पष्ट किया। इससे भी दलित प्रभावित हुआ और उसमें चेतना का निर्माण हुआ।

दलित चेतना की आवश्यकता :-

भारत में हजारों वर्षों से हिन्दुओं के धार्मिक ग्रंथों के आचरण सिद्धान्तों के बोझ को अपने सिर पर ढोनेवाले 'दलित' वैज्ञानिक युग में भी उस बोझ से मुक्त नहीं हैं। दलितों को प्राचीनता के मानवता शून्य, भेदनीति युक्त, और एकांगी विचारों का स्वीकार कहाँ तक संभव है? क्या वे अन्य वर्गों की तरह बंधन मुक्त और सम्मानपूर्ण जिन्दगी के हकदार नहीं है? आदि कई प्रश्नों में समाज अटका हुआ है। भारतीय उच्चवर्णियों को दलितोद्धार की यह बात कभी तीव्रता से महसूस नहीं हुई। उन्होंने दलितों को दबाकर अपनी सेवा में ही लगाया। शूद्र जन्म से अत्यन्त नीच हैं, ऐसा मानना सामाजिक अन्याय है। इस परभी कोई विचार नहीं करता था।

आर्थिक नीति साम्राज्यवादी होने से जमींदारों, मजदूरों में प्रतियोगिता शुरु हुई। प्रतियोगिता में कमजोर, दरिद्री तो टिकता नहीं। इस बात का अनुभव दलितों को आ गया। दलित स्पृश्यों के आश्रित होने से उनकी जान स्पृश्यों के हाथ में थी परंतु स्पृश्य-अस्पृश्य का भेद मिटना यह घटना दलितों के सामाजिक जागरण के लिए उपकारक सिद्ध हुई।

प्राचीन भारतीय समाज के गठन में शूद्र तो परावलंबी, पराधीन सेवक थे। प्राचीन काल में सामाजिक जीवन से बहिस्कृत निर्दलित जो लोग थे वे तो शूद्र-अति शूद्र ही थे। उनके जीवन स्तर को ऊपर उठाने का मौका नहीं दिया जाता था। कुछ अपने उद्धार का मार्ग ढूँढते थे। अनिर्वासित शूद्र मंदिर प्रवेश या रामायण, महाभारत, पुराण आदि के श्रवण से भक्ति -मार्ग द्वारा आत्मोन्नति कर रहे थे। परंतु निर्वासित शूद्रों को बहिस्कृत किया जाता था। दलितों में अधिकांश जंगली टोलियों का समावेश होता था। इन्हें ही बाद में 'दलित' नाम प्राप्त हुआ। निषाद और चांडाल इनके उदाहरण हैं। इन्हें पंचम वर्ण की संज्ञा से अभिहित किया गया है। ग्रीक, शक, कुशान, हूण आदि परकीय लोगों को अस्पृश्य माना जाता था। आर्थिकता की दृष्टि से दलित शोषित ही था।

दलित सवर्णों, जमींदरों, ठाकुरों के यहाँ काम करते थे। खेती में मजदूरी करते थे। वे दास, गुलाम जैसी जिन्दगी जीते थे। बिना मेहनताना काम करते थे। राजनीति में चुनाव लड़ना तथा वोट देने का भी अधिकार नहीं था। यदि हो तो जमींदार, ठाकुरों के इशारों पर वे चलते थे। राजनीतिक अधिकार नहीं था। सामाजिकता की दशा दयनीय थी। मंदिर, पनघट, पाठशाला में प्रवेश करना मना था। उनके पनघट, पाठशाला अलग थे। सार्वजनिक, सामाजिक समारोह में उन्हें शामिल नहीं किया जाता था। समाज से बहिष्कृत, शापित

उनका जीवन था। धार्मिकता की दृष्टि से धर्म ग्रंथ पठन, मनन करना मना था। भगवान का नाम लेना, बच्चों को वही नाम देना पाप था। यहाँ स्पष्ट है कि दलित सभी स्तरपर शोषित था। मानव होकर भी मानव से दूर था। इसी कारण दलित में चेतना का निर्माण होना आवश्यक था। शोषित, शापित दलित चेतित बनकर स्वत्व की रक्षा का प्रयास कर रहा था। प्राचीन, शोषित दलित अब नहीं रहा। वह शिक्षित बना है। उसमें समता, समानता, अधिकार, स्वत्व का भाव पैदा हो रहा है। इसी कारण दलित में उत्पन्न चेतना दब नहीं जाएगी, ऐसा लगता है। यह चेतना दलित जीवन के लिए एक महत्वपूर्ण आयाम बनी है। सामाजिक समता, दलित जीवन का विकास, राष्ट्र की उन्नति एवं राष्ट्र के उद्धार के लिए दलितों में चेतना का निर्माण होना आवश्यक है।

दलित भारतीय समाज जीवन से जुड़ा एक अंग है। जब तक दलित समाज विकसित नहीं होता तब तक भारतीय समाज को भी विकसित कहना संगत नहीं है। समाज का एक बड़ा तबका उपेक्षित है, शोषित है, ऐसी अवस्था में पूरे समाज को विकसित नहीं माना जाता। दलित समाज में चेतना लाने का कार्य सामाजिक संगठन, कार्यकर्ता और राजनीतिक नेताओं ने किया है। कई बार कानून के सहारे दलितों का विकास करने की कोशिश की गई। कई विकास योजनाओं का निर्माण किया गया। परंतु दलित समाज इन विकास योजनाओं से कितना लाभान्वित है? कितना विकसित हुआ है? यह सोचना और विचार करना आज आवश्यक है। क्योंकि जो दलित अज्ञानी रहा है। उसे सरकारी विकास योजना की जानकारी नहीं मिलती फिर भी दलितों के विकास की बात की जाती है। इसलिए दलितों को उनके सरकारी विकास योजनाओं की जानकारी दिलाने के लिए राजनीतिक आरक्षण, शिक्षा व्यवस्था में आरक्षण की जानकारी लाने के लिए उनमें चेतना उत्पन्न करना आवश्यक है। जब दलित चेतित होगा तब समृद्ध होगा। सरकारी विकास योजनाओं से लाभान्वित होगा। यहाँ स्पष्ट है समाज विकास के लिए दलितों के विकास के लिए दलित चेतना की आवश्यकता है।

निष्कर्ष :-

यहाँ स्पष्ट है जब दलित संगठित होगा, शिक्षित बनेगा तब संघर्ष करेगा। यह संघर्ष विद्रोह का रूप लेगा। यह विद्रोह सामाजिकता का रंग लेगा तथा उनके मूल में विकास की धारा रहेगी, तो वह चेतना बनेगी। यह चेतना जनहित, राष्ट्रहित, देशहित के लिए कल्याणकारी होगी। इससे देश का सही अर्थ में विकास होगा, समाज का हित होगा। इसलिए दलित में चेतना का निर्माण होना आवश्यक है। चेतना से परिवर्तन, परिवर्तन से विकास, विकास से प्रगति एवं समानता यही विकास का क्रम है। अत: दलितों में चेतना का निर्माण होना दलितों के विकास का कारण है। अत: समानता, सामाजिक परिवर्तन, सांस्कृतिक परिवर्तन एवं उद्धार के लिए दलितों में चेतना का निर्माण होना आवश्यक है।

आलोच्य उपन्यासों में चित्रित दलित-चेतना :-

समाज सुधारकों ने सामाजिकता की दृष्टि से अपना कार्य किया तो साहित्यकारों ने सामाजिकता की दृष्टि से दलित जीवन को रेखांकित करने का प्रयास किया। उपन्यास, काव्य, नाटक, रेखाचित्र, आत्मकथा, कहानी में दलितों का जीवन, उनकी समस्या, उनमें उत्पन्न चेतना, नवजागरण आदि को चित्रित करके सामाजिक प्रतिबद्धता को प्रमाणित किया। राहुल सांकृत्यायन का 'जय यौधेय' का अर्जुन जातीयता का विरोध करता है। निराला के 'निरूपमा' का कुमार डी.लिट. उपाधि प्राप्त करने पर भी मोची का काम करने में अपमान नहीं मानता तो 'कुल्लीभाट' में दलित बच्चे पाठशाला में पढ़ते हैं। नागार्जुन के 'दु:खमोचन' में चमार का मुखिया ध्वजारोहण करता है, तो 'परती-परिकथा' की चमार सुबंश रजिस्टर्ड विवाह करती है। यज्ञ दत्त शर्मा के 'बदलती राहे' की शैलकुमारी एम.ए. तक पढ़ाई करती है। जगदीशचंद्र के 'धरती धन न अपना' का काली संगठन बनाकर चौधरी को फटकारता है। रामधारी सिंह दिवाकर के 'आग-पानी आकाश' का युगेश्वर सचिव के पदपर कार्य करता है तो भागवत बाबू डिग्री कॉलेज की स्थापना करता है आदि घटनाओं से स्पष्ट है कि साहित्यकारों ने दलित चेतना को चित्रित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया हैं।

डॉ. भगवती प्रसाद शुक्लजी ने 'खारे जल का गांव' उपन्यास में विंध्याचल के देवगांव और बेवहारी गांव की कथा है। जाति पंचायत और जातिव्यवस्था का भी वर्णन है। इसमें चनकी एक संघर्षशील नारी है। खलिहान में गेहूँ, चने की 'गहाई-मिजाई' समाप्त होने पर चनकी को बखारी में अनाज रखने का काम मिलता है। एक बार चनकी अकेले टोकरा भर अनाज ले जाती है, तब किस्सू सिंह ने उसे ओसारे में पकड़ लिया। अनाज से भरा टोकरा किस्सू सिंह के ऊपर फेंककर चनकी भाग खड़ी हुई चनकी के चिल्लाने पर छिट्टन वहाँ आ जाता है। किस्सू सिंह का पक्ष लेते हुए छिट्टन गुस्से में चनकी को एक झापड़ लगा दिया। चनकी उन्हें फटकारती हुई कहती है - "तू गुलामी कर अपने मालिक केर, हम न करब। हम मइके जाइ रहे हन।"[19] चनकी अपनी इज्जत बचाने के लिये किस्सू सिंह के काम के साथ अपना घर तक छोड़ देती है। अपने ऊपर होने वाले अन्यास के खिलाफ पति को धिक्कारने वाली, जमींदार किस्सूसिंह का घिनौना, विकृत रूप स्पष्ट करने वाली चनकी विद्रोही नारी है। उसका बयान इसी बात का प्रमाण है। जो अन्यायी पति का भी त्याग करने में हिचकिचार्ता नहीं।

राजनीति और भ्रष्टाचार का आयाम बनी है। आज पढ़ा-लिखा दलित अपने अधिकारों के प्रति सजग रहा है। अधिकारों के सहारे समाज व्यवस्था में परिवर्तन लाना चाहते हैं। प्रस्तुत उपन्यास का अरविन्द, मास्टर जमुना इसी कोटि का पात्र है। उनका कार्य दलितों में जागृति उत्पन्न करा देता है। जाति-पंचायत समाज जीवन का महत्वपूर्ण अंग बनी है। उसका भी विरोध करने वाले पात्र दिखाई देते हैं। यह एक चेतना ही है। जमुना मास्टर राजनीति में जाति-पंचायत का विरोध करने में जुट जाते हैं, वे परिवर्तन लाना चाहते हैं। वे कहते

हैं - ''मैं तटस्थ नहीं रह सकता। मैं यह सब नहीं देख सकता। आज गरीबी, भूख, अकाल देश की राजनीति के लिये न सिर्फ जरूरी बल्कि उर्वरक तत्व बन गये है।'' यहाँ स्पष्ट है कि सम्पन्नता आने पर समझ और शिक्षा में प्रसार होता है, बल्कि जनता की राजनैतिक महत्वाकांक्षा और स्वाभिमान में भी बढ़ोत्तरी होती है। अत: राजनीति में परिवर्तन लाना आसान काम नहीं है। अरविन्द प्रगतिवादी विचारों का वाहक है जो राजनीति क्षेत्र में संगठन के बल पर चेतना लाने का प्रयास करता है। 'क्रांतिकारी मोर्चा' का आयोजन इसी बात का प्रमाण है। भ्रष्टाचार, अन्याय, शोषण, अत्याचार का विरोध करने की उनकी प्रवृत्ति हैं। उसे प्रकट करते हुए अरविन्द कहता है - ''हम लोग क्रातिकारी मोर्चा बनाएं और हर तरह के भ्रष्टाचार का विरोध करें। यदि हमें प्रारंभिक प्रतिरोध में सफलता मिले तो पंचायत और विधानसभा के चुनाव लड़े।'' इस कथन में अरविन्द का आत्मविश्वास एवं कर्मनिष्ठा दिखाई देता है, जो उनकी चेतना बनी है।

अरविन्द 'नवयुवक क्रांतिकारी मोर्चे' का गठन करता है। उसका इश्तिहार दूसरे दिन प्रकाशित किया गया जिसमें मांग की गई थी - ''मजदूरों की कम से कम मजदूरी ढाई रूपया हो। पीने के पानी की अविलम्ब व्यवस्था हो। गांव में एक कॉलेज और एक प्राइमरी हेल्थ सेंटर खोले जाए।''[20] इस इश्तिहार पर किसी ने विशेष ध्यान नहीं दिया, परंतु तीसरे दिन सरकारी तालाब में कामकरने वाले मजदूरों ने हड़ताल की। जुलूस निकाला और रघ्यू सरपंच के घरके सामने प्रदर्शन किया। इस घटना से लोगों का ध्यान क्रांतिकारी मोर्चे की ओर गया। इस प्रकार मजदूरों में जिस चेतना के दर्शन दिखाई देते हैं वह भविष्य की सफलता का संकेत दे रहे थे, ऐसा यहाँ प्रतीत होता है।

ग्रामजीवन में जाति-व्यवस्था का विरोध हो रहा है। मंदिर प्रवेश निषद्ध का विरोध करते हुए सुग्रीव कहता है - ''ई बड़कवा, छोटकवा यहाँ नहीं चलेगा, ई भगवान का दरबार है। मंदिर में सभी समान हैं।'' वह कथन नई चेतना का प्रतीक है। मंदिर में समता, समानता का होना जरूरी है। यही संदेश देने वाला सुग्रीव कबीरपंथी लगता है। संतो ने जिस समता का प्रचार किया वही कार्य साहित्यकार कर रहे हैं ऐसा लगता है। भगवान के दरबार की महानता स्पष्ट करना नई विचारधारा का प्रमाण है।

पुलिस जनता की रक्षक होती है परंतु कभी-कभी उनकी लाठियाँ बेकसूरों पर भी गिरती है। लोगों की पिटाई करना, जेल भेजना, झूठे आरोप लगाना आदि रूप में पुलिस दलितों का शोषण करती है। इसके खिलाफ अब चेतना जागृति हो रही है। ऐसी ही मंदिर प्रवेश की घटना का वर्णन भगवती प्रसाद जी ने किया है। मंदिर में औरतों के ऊपर हुए हमले का सुग्रीव विरोध करता है। जब पुलिस सुग्रीव को फटकारती है तब सुग्रीव कहता है - ''जमादार साहब, परजातंत्र है, परजातंत्र। आप इस तरह जनता का अपमान नहीं कर सकते। मंदिर में छोटे बड़े सबका अधिकार हैं।''[21] सुग्रीव का यह फटकारना जन चेतना का ही प्रमाण है, अर्थात पुलिस

के नाम से उठने वाली भय से कांपनेवाली जनता अब अपने अधिकार की प्रजातंत्र की बात कहती है। यह परिवर्तित समाज को दर्शाने वाली घटना है। गांव में बढ़ते हुए आतंक पर आत्मचिंतन करने के पश्चात अत्याचार का विरोध करने के लिये संगठन की स्थापना करने हेतु अरविन्द तरूणों की एक बैठक बुलाकर कहता है - ''गांव में इधर दो तीन महीने से जो घटनाएँ हुई हैं। उनसे मैं बहुत चिंतित हो उठा हूँ। यदि गांव के तरूण इन घटनाओं को तटस्थ होकर देखते रहे तो, हमारे समाज का उन्नयन कभी न होगा। गांव की लड़कियों का अकारण बेइज्ज़त किया जाता है, तरुणों को पीटा जाता है और हम असहाय देखते रहते हैं। गरीबों, मजदूरों और किसानों को संगठित करके इसका प्रतिरोध कर सकते हैं।''[22] सामाजिक उन्नयन के लिए संगठन का होना जरूरी है। नारी अस्मिता की रक्षा के लिये गांव में एकता का होना जरूरी है। यह कार्य युवा ही कर सकते हैं। युवाओं को संगठित करने में अरविन्द एक नये विचारधारा का, चेतित पात्र रहा है। अरविन्द बायकाट, अनशन, हड़ताल, मोर्चा, जुलूस आदि रास्तों को अपनाकर अपनी मांगे मनाने का प्रयास करता है।

ठाकुरों के अत्याचार का विरोध करने के लिए उनके खेत में चैतुआ न काटने के निर्णय पर लोगों द्वारा शंका उपस्थित की जाती है कि यदि दूसरे गांव से मजदूर आयेंगे तो क्या होगा? इस पर अरविन्द कहता है कि - ''हम लोग उन्हें गांव में घुसने न देंगे। सत्याग्रह करेंगे।'' अत: अरविन्द गांधीवाद का पात्र लगता है। यहाँ स्पष्ट है भगवती प्रसाद शुक्लजी ने 'खारे जल का गांव' में अरविन्द, सुग्रीव, जमुना मास्टर, चनकी आदि के माध्यम से दलितों में उत्पन्न होने वाली चेतना को दर्शाया है। मंदिर प्रवेश, राजनीतिक अधिकार, शिक्षा-प्रसार, मजदूरी की मांगे आदि घटनाएं इसका प्रमाण है। यहाँ की चेतना विकासात्मक विधायक रखती है।

प्रस्तुत उपन्यास में अरविन्द, सुग्रीव प्रगतिवादी चेतना के पात्र है। अरविन्द द्वारा सहकारी उपभोक्ता भांडार का उद्‌घाटन एक चमार के हाथ से करवाना, कॉलेज, हेल्थ सेंटर खुलवाना, मजदूरों की मांगे पेश करना, नवयुवकों का संगठन बनाना यह घटना चेतना का प्रतीक है। पुलिस और ठाकुर की मनमानी का विरोध करते हैं। यहाँ स्पष्ट है शिक्षा प्रसार, राजनीतिक परिवर्तन के कारण अब धीरे-धीरे दलितों में संगठन हो रहा है। वे अधिकार के लिये जाग उठे हैं। अपना पारविारिक जीवन उन्नत करने में सरकारी योजनाओं का लाभ उठा रहे है ऐसा लगता है।

जगदीश चंद्र जी के द्वारा रचित उपन्यास 'धरती धन न अपना' में भी दलित चेतना के संदर्भ में विचार किया गया है। जमींदार द्‌वारा ग्रामवासियों की पिटाई करना, भय एवं आतंक जमाना, जमीन हड़पना आदि रूप में शोषण करते हैं विशेषत: नारी का दैहिक शोषण किया जाता है, परंतु अब नारी जागृत हो रही है। उपन्यासकारों ने उस पर प्रकाश डाला है। जगदीशचंद्र के 'धरती धन न अपना' की ज्ञानो इसका प्रमाण है। मंगू चमार द्वारा शिकायत करने पर चौधरी हरनाम सिंह बड़ी ही निर्दयता के साथ जीतू की पिटाई करके उसे लहू-

लुहान कर देता है। तब इसकी प्रतिक्रिया में मंगू की बहिन ज्ञानों चौधरी को गाली देती है। वहाँ पर सारे गांव के लोगों में से केवल ज्ञानो ही इसका विरोध करती है। यहाँ नारी चेतना का प्रमाण है। बेबे हुकमा द्वारा इस पर भय दिखाने पर वह कहती है कि - ''क्या करु ! नाजायज बात देखकर मुझे गुस्सा आ जाता है। चुप नहीं रहा जाता।''[23] इसी घटना पर उपन्यास का नायक काली अपनी चाची से विरोध दर्ज करते हुए कहता है कि - ''चाची, चौधरी ने जीतू को नाजायज मारा है। उसका कोई कसूर नहीं था। अगर जीतू की जगह मैं होता तो चौधरी की बांह मरोड़ देता।''[24] ज्ञानों का चौधरी को गालियाँ सामान्य अबला का नहीं बल्कि विद्रोही नारी का प्रतीक है। काली के कारण चेतना को बढ़ावा मिल रहा है। काली भी प्रगतिवादी विचारों का पात्र है।

डॉ. बिशनदास चौधरी धड्डम की 'काला ब्राह्मण और गोरे चमार के हरामी होने' की बात का विरोध करते हुए कहता है कि -''यह बिल्कुल अनसांइटिफिक थ्यौरी है। अब यह सिद्ध हो चुका है कि खून, काले आदमी का हो या गोरे एक जैसा ही होता है। इस झगड़े की असली वजह प्रोलतारी तबका जाग उठने से पैदा हुआ है। उसे अपने अधिकारों का एहसास होने लगा है जिससे चमार अब जाट का रौब बर्दाश्त नहीं करेगा।''[25] डॉ. बिशनदास के माध्यम से उपन्यासकार ने पढ़े -लिखे पात्रों के माध्यम से वैज्ञानिकता की बातें कही है। वैज्ञानिक मापदण्डों के सहारे मानव एवं मानवता की व्याख्या करने का प्रयास किया गया है। बीसवीं शदी के उपन्यासों की यह एक अनोखी प्रवृत्ति दिखाई देती है। चमार जाटों का रौब बर्दाश्त नहीं करेंगे, यह उनका कथन चमारों की मानसिकता दर्शाता है।

जमींदारों की बेगार लेने की, दलितों द्वारा मुफ्त काम करवाकर लेने की मतलबी प्रवृत्ति रही है। अज्ञानी, भोले भाले दलित चुपचाप यह अन्याय सह लेते थे परंतु अब ऐसी स्थिति नहीं है। उपन्यासकार ने काली के माध्यम से प्रगतिवादी चेतना को उजागर किया है। जो मुफ्त में काम नहीं करता न बिना काम के पैसे लेता है। चौधरी मतलबी जमींदारों की नीयत का प्रमाण है, जिसका प्रतिरोध काली करता है। नंदसिंह जूते बनाने का काम करता है। गांव के चौध्ररी उससे जूते बनवाते हैं, परंतु उसे पैसा नहीं देते, रौब से डांट-फटकार कर चुप कर देते हैं। ऐसे ही एक बार मुंशी चौधरी जूते का पैसा नंदसिंह को नहीं देते बल्कि उसे गालियां देनी शुरू कर देते हैं। तब काली कहता है - ''चौधरी क्यों जोर जबरदस्ती करता है, अपनी मेहनत के पैसे मांगे हैं कोई डांग (लाठी) नहीं मारी है।'' गांव के चौधरी सारी चमादड़ी से बेगार का काम लेते हैं। उन्हें पैसे अथवा अनाज कुछ नहीं देते। गांव में आयी बाढ़ से बचने के लिए बांध काटा गया था तथा उससे हुए खड्डे को भरने के लिये सारी चमादड़ी को चौधरी काम पर लगा देता है, परंतु किसी को मजदूरी (दिहाड़ी) के पैसे नहीं देते हैं तब काली ताया बसंता से कहता है - ''कोई अंधेर नगरी तो है नहीं, चौधरी बेगार अपने खरीदे हुए कमीन या चमार से ले सकता है, सारे गांव से नहीं ले सकता। कल शाम को अगर वे पैसा नहीं देंगे तो हम आप मांग लेंगे।'' पैसा मांगने जब

काली जाता है तब चौधरी हरनाम सिंह उसे गालियाँ देता है। तब काली उसका विरोध करता है, गालियाँ न देने के बारे में सुनाता है - ''चौधरी ये गालियाँ मुझे भी आती हैं। मुँह सम्भालकर बात कर। हम मेहनत बेंचते हैं, इज्ज़त नहीं। माँएं-बहने सबके घर में हैं।''[26] काली दलित पात्र होकर भी उसकी जबान पढ़े-लिखे पात्र की है तो जमींदार गालियाँ बकते हैं जो माँ-बहन की इज्ज़त की रक्षा करना महत्वपूर्ण मानता हैं, मगर जमींदार माँ-बहन के संदर्भ में गाली-गलौच का प्रयोग करते तो दलित युवा उत्तेजित होकर प्रतिरोध करने में पीछे नहीं रहता, तथा अपने पसीने की कमाई पाने के लिए संघर्ष भी करता है। मुफ्त, हराम या बेगारी का विरोध करता है। जमींदार को दृढ़ शब्दों में हार मानने वाला काली कहता है ''मैं बिना पैसें के काम नहीं करूँगा। मैं किसी के पास गिरवी नहीं पड़ा हूँ, जो बेगार करू।''

इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में चौधरियों के अत्याचार का विरोध करने की चेतना, चमादड़ी के लोगों में जागृत हो रही है। ज्ञानों के रूप में नारियाँ चेतित हो रही हैं। तथा नारियों की इज्जत की रक्षा के लिए काली संघर्ष करता है, वह चौधरीको धमकाता है। ये सभी घटनाएं चेतना जागृति का प्रमाण है। यहाँ उपन्यासकार ने चेतना दिखाने का सफल प्रयास किया है ऐसा लगता है।

मदन दीक्षितजी ने उपन्यास 'मोरी की ईंट' में दलितों में किस प्रकार चेतना जागृत हो रही है उसे दिखाने की कोशिश की है। प्रस्तुत उपन्यास में अधिकांशत: धर्मांतर, धर्म परिवर्तन को चित्रित किया गया है। उत्तरांचल के अलीबढ़, मेरठ, अल्मोड़ा इत्यादि क्षेत्रों के मेहतरों का जीवन चित्रण करते समय कुछ चेतित पात्रों के दर्शन होते हैं जिसमें मंगिया मुख्य नारी पात्र के रूप में दिखाई देती है। वह चुंगी डिपार्टमेंट में काम करती है। उसके पति झरगदिया को चुंगी का जमादार हीरालाल शराब पिलाकर उसकी पत्नी मंगिया की खूबसूरती का फायदा उठाना चाहता है। तब मंगिया अपने पति झरगदिया से इसका विरोध करती है तो उसका पति उल्टा उसे ही गालियाँ देते हुए डांटता है कि ''वह कुछ ऐसा नहीं करेगी जिससे जमादार नाराज हो।'' नहीं तो वह उसे बहुत पीटेगा। इसका विरोध करने के लिये मंगिया आगे बढ़ती है। शराबी पति, कामांध जमादार के बीच फंसी अबला मंगिया उसका डटकर मुकाबला करती है। उसका आत्मकथन उसकी मानसिकता, मानसिक उलझन को दर्शाता है। वह कहती है - ''सात फेरों के ब्याहता के इस बर्ताव पर सुरक्षा की आस बांधना बेकार है। यह तो एक बोतल शराब के लिये शहर के किसी भी चौराहे परउसको नीलाम करने में भी हिचकिचाहट नहीं करेगा। अत: अपनी जिंदगी का रास्ता अब उसे खुद ही तय करना पड़ेगा और झरगदिया नाम के इस पतित्व की लाश का बोझ कंधों पर उसे ही ढोना पड़ेगा क्योंकि उसका पति हद दरजे का कामचोर और शराबी था।''[27] कामचोर, मक्कार, शराबी पति का बोझ ढोने वाली मंगिया जागृत नारी का प्रमाण है। अपना जीवन, जीवन का रास्ता स्वत: चुनने वाली, बनाने वाली नारी चेतित नारी है।

मेहतर कर्मचारी अन्याय के खिलाफ एक जुट होकर लड़ने के लिए, अपनी मांगों को पूरा करवाने के लिए अलीगढ़ (यू.पी.) में प्रभावशाली संगठन के रूप में 'मेहतर संघ' की स्थापना करते हैं। संगठन के बल पर मेहतर कर्मचारियों की तनख्वाह में पांच-पांच रूपयों की बढ़ोत्तरी,जाड़ों में गरम वर्दी, मेहतरानियों को जचगी की एक मास की छुट्टी और मेहतर कर्मचारियों के लिये कल्याण कोष की मांग को लेकर हड़ताल की नोटिस देते हैं। इस प्रकार कर्मचारियों में अपने हक के लिए लड़ने का साहस पैदा होता है। जो कि चेतना को ही दर्शाता है। और संगठन के बल पर अन्याय, अत्याचार , शोषण के खिलाफ एकजुट होकर लड़ते हैं तथा अपनी जीत हासिल करते हैं। यहाँ पर दलित मजदूरों में चेतना की जागृति स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

यहाँ स्पष्ट है मेहतर एक अछूत जाति है, परंतु अब उनमें भी चेतना की लहर दौड़ रही है जिसका परिणाम स्वरुप 'मेहतर संघ' की स्थापना हुओ है। एक विशिष्ट जाति के लोग संगठित होते हैं तब स्वजाति का विकास होता है। यही दिखाने का प्रयास उपन्यासकार ने किया है। बींसवी शती का परिवर्तित, चेतित दलित के यहाँ दर्शन होते हैं। आम्बेडकरजी के 'संगठित बनो, संघर्ष करो' नारे का यह परिणाम ही है।

'एकलव्य' उपन्यास में चंद्रमोहन प्रधान जी ने महाभारत कालीन कथा को चित्रित किया है। उसमें शिक्षा की प्राप्ति के लिए तथा उसका अपने समाज के पिछड़े लोगों का विकास करने की एकलव्य की योजना में चेतना के दर्शन होते हैं। एकलव्य आचार्य द्रोण के पास धनुर्विद्या सीखने के लिये जाता है। आचार्य द्रोण उसका उद्देश्य जानने के लिये पूँछते हैं कि तुम इस शिक्षा को क्यों प्राप्त करना चाहते हो। इस पर एकलव्य आचार्य द्रोण से कहता है - ''मैं चाहता हूँ, आपसे धुनर्विद्या प्राप्त कर निषादों को भी इसका ज्ञान दे सकूं! वे भी मनुष्य हैं, उनकी भी समस्याएं, महत्वाकांक्षाएं हैं। उन्हें भी उन्ही परिस्थितियों में जीवन धारणा करना पड़ता है जिनमें किसी भी वर्ण अथवा वर्ग को अपने देश, संस्कृति, धर्म से संपृक्त एक महत्तम विद्या के श्रेष्ठतम से वे वंचित क्यों रहे ? मैं उन्हें संगठित करना चाहता हूँ। वे बहुसंख्या में हैं तथापि अल्प विकसित, असंगठित हैं, असम्पन्न हैं। वे वनों में विस्तार कर अपने राज्य बसायें, कृषि व्यवसाय करें, मात्र मत्स्याखेट आदि पर निर्भर न रहें, और शत्रुओं से निर्भय हों।''[28] स्वजाति का उद्धार करने वाला एकलव्य शिक्षाप्रसार, संगठन, कृषि व्यवसाय की नई शिक्षा आदि विधायक हेतु एवं लक्ष्य पूर्ति का प्रयास करने वाला एकलव्य नये युग का क्रांतिकारी ही लगता है। उनके विचार उपन्यासकार की विचारधारा का प्रमाण है। तो दूसरी ओर द्रोणाचार्य की विचारधारा धर्मांध, शोषक वृत्ति को दर्शाती है। जो विचारधारा दलितों को हीन रखना चाहती है, आचार्य द्रोण की प्रवृत्ति का विरोध करता है। एकलव्य के प्रगतिवादी विचारों का विरोध करते हुए द्रोणाचार्य कहते हैं - ''सामाजिक व्यवस्था के प्रति तुम्हारी अनास्था, हीन, क्षुद्र जातियों को संगठित करने का विचार, विद्रोही भावना, ये वर्तमान समीकरणों और यथास्थिति को नष्ट करने का कारण हो सकती है। नवीन संकट उत्पन्न हो सकता है। अतः मैं

तुम्हें धनुर्विद्या की शिक्षा नहीं दे सकता। तुमजा सकते हो।'' परंतु एकलव्य शिक्षा प्राप्ति पर अडिग रहता है, प्राप्त करता ही है।

एकलव्य जब आचार्य द्रोण से मिलने हस्तिनापुर जा रहा थो शाम होने पर वह कुछ व्यक्तियों से पांथशाला का पता पूँछता है तो मद्यपी उससे झगड़ा करने लगते हैं। इतने में शौंडिक आता है और वह एकलव्य को अपने घर ले जाता है। वह कहता है कि यदि मैं समय पर नहीं आता तो सैनिक तुम्हें पकड़कर बंद कर देते क्योंकि तुम निषाद हो, बाहरी हो और मद्यप स्थानीय नागरिक है। इस पर एकलव्य कहता है - ''न्याय व्यवस्था में तो सब बराबर है तात।'' तब शौंडिक उसे बताता है कि सिद्धान्त तो यही है किन्तु एक सामान्य नागरिक अथवा उच्च वर्ण के व्यक्ति की अपेक्षा एक निषाद को ही हीन और अपराधी माना जाता है। भले ही वह नागरिक मद्यप हो, दुष्ट वेश्यागामी हो, जुआरी हो! और निषाद साधु प्रकृति का हो। इस पर एकलव्य का दिया गया प्रति उत्तर चेतना का प्रतीक है वह कहता है - ''यह तो बड़ा अन्याय है। इसका समर्थन कौन करेगा?'' यहाँ स्पष्ट है प्राचीन समाज व्यवस्था में निषाद को अपराधी माना जाता था। चाहे वह सुसंस्कारित ही हो। परंतु दुराचारी सवर्ण को श्रेष्ठ माना जाता था। यहाँ श्रेष्ठ-निकृष्ठ जाति पर आधारित है। अन्यायी बात, भ्रष्ट शिक्षा व्यवस्था, द्रोणाचार्य की कुनीति का विद्रोह करने वाला एकलव्य नई चेतना का प्रमाण ही है।

आचार्य द्रोण द्वारा शिक्षा देने से इन्कार करने पर, जब एकलव्य जंगल में निवास करके शिक्षा प्राप्त करने हेतु गुरू की प्रतिमा को साक्षी बनाकर अभ्यास क रने का निश्चय करता है। यही घटना उसमें उसके चेतना को दर्शाती है तथा उपन्यासकार ने इसे स्पष्ट करने का प्रयास किया है। रास्ते में वासुदेव कृष्ण यह बताते हैं कि वह तो उनका चचेरा भाई है। तब भी एकलव्य कहता है कि - ''मैं पूर्ववत निषाद ही रहूँगा। मेरा उद्देश्य भी वही रहेगा, निषादों और अन्य दलित जातियों का उन्नयन।''[29] यहाँ पर स्पष्ट होता है कि एकलव्य एक चेतित तथा दृढ़ निश्चयी पात्र है। जो अपने निश्चय पर अडिग रहना चाहता है। यहाँ स्पष्ट है महाभारत की कथा और एकलव्य का चरित्र आदि का आधार लेकर उपन्यासकार ने वनवासी, निषाद जाति में किस प्रकार चेतना जागृत हो रही है, उसमें जाति अभिमान और शिक्षा प्रगति की भावना किस प्रकार बढ़ रही है उसे दर्शाया है। एकलव्य के विचार प्रगतिवादी साहित्यकार के विचार ही हैं। एकलव्य का जीवन आदर्श दलितों के लिए प्रेरक लगता है। यदि एकलव्य ने जिस प्रकार संघर्ष करते हुए सफलता प्राप्त की उसी प्रकार आज भी दलित युवा कार्य करें तो उसे भी यश मिलेगा, यही संदेश दिया है।

'आग-पानी आकाश' उपन्यास में रामधारी सिंह दिवाकर जी ने दलित चेतना और प्रगति के बारे में सोचा है। उन्होंने शिक्षा, संगठन, विद्रोह के द्वारा प्रकट करने का प्रयत्न किया है। गांव का धोबी बब्बन शिक्षा के महत्व को समझकर अपने बच्चों में सोयी चेतना को जागृत करने के लिये, शिक्षित कराने के लिये, गांव के

पाठशाला में उनका दाखला करवाता है, जिसके बदले वे ब्राह्मणों तथा जमींदारों और स्कूल के मास्टरों का मुफ्त में कपड़ा धोता है। परंतु वह बच्चों को शिक्षित करवाने का प्रयत्न करता है। शिक्षा प्राप्ति के लिए, बच्चों की पढ़ाई पूरी करने के लिए बब्बन धोबी द्वारा किया गया कार्य आदर्श पिता का प्रमाण है अर्थात उन्होंने शिक्षा का महत्व समझ लिया था, अपने बच्चे शिक्षित हों यही उनका सपना था और उसे वह पूरा करना चाहता है। यह घटना आम्बेडकरी विचारों का प्रभाव दर्शाती है।

गांव में आदिवासी ग्रामसेवक उरांवजी भी गांव के निम्न जाति के टोले में घूम-घूमकर शिक्षा प्राप्त करने के बारे में लोगों में जागृति कराते हैं। परिणामस्वरुप लोगों में शिक्षा के प्रति चेतना जागृत होती है तथा जिज्ञासा भी पैदा होती है और वे अपने बच्चों को पढ़ने के लिए स्कूल में भर्ती करवाते हैं। इस प्रकार से लोगों में शिक्षा के प्रचार-प्रसार की जिज्ञासा के फलस्वरुप स्कूलों में हरिजन लड़कों का प्रवेश एक तरह से स्वीकृत हो चला। भागवत और युगेश्वर को कस्बे के स्कूल में हरिजन छात्रवृत्ति भी मिलती है जिसके परिणाम स्वरुप युगेश्वर पटना के कालेज में उच्च शिक्षा प्राप्त करने जाता है। वहाँ पर छात्रावास में रहकर सवर्णों की मानसिकता, शैक्षिक और सामाजिक परिवेश को गहराई से महसूस करता है। हरिजन होने की हीनता ग्रंथि उसमें न होने के कारण हाथ पर हाथ रखे बैठना अथवा पलायन करने में समस्या का समाधान नहीं था। इस प्रकार वह विचार करता हैं। अत: उसने भीतर-ही-भीतर कुंठा को पालते हुए पढ़ाई जारी रखता है जिसके कारण वह एम.ए. करने के उपरान्त वित्त विभाग में आरक्षण का लाभ लेकर अवर सचिव के पद पर नियुक्त होता है। इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षा के बल पर दलित अपना विकास कर सकता है। सचिव जैसे उच्च पद की प्राप्ति भी हो सकती है।

हरिजन और पसियान टोले का रामसजीवन और करमलाल महतों भी चेतित पात्र हैं। रामसजीवन भागवत बाबू के अत्याचार के खिलाफ कस्बे के हरिजन एस.पी. से मिलता है तथा उन्हें करमलाल महतों पर लगाये झूठे आरोपों की जानकारी देता है। भागवत बाबू के अत्याचार से बचाने के लिए अपनी बहिन बेचनी को तथा उसके बच्चे को लेकर पटना जाता है। जहाँ पर उसे टेलरिंग का कोर्स करवाकर अपना जीवन अपने ढंग से जीने के लिए आत्मनिर्भर बना देता है। बेचनी द्वारा टेलरिंग का कोर्स पूरा करके अपनी जीविका चलाना, अपने पैरों पर खड़े रहने की कोशिश करना महत्वपूर्ण घटना लगती है। नारी का आत्मनिर्भर होना चेतित नारी का प्रमाण है। दूसरीओर करमलाल महतो भागवत बाबू के अत्याचारों का विरोध करता है,परंतु सरकारी अफसरों की सांठ-गांठ तथा मिली भगत के फलस्वरुप वह झूंठे आरोपों में फंसकर जेल चला जाता है। इस उपन्यास में चेतित पात्रों में भागवत, युगेश्वर, करमलाल महतों, राजसजीवन, बेचनी, बब्बन धोबी, झम्मन धोबी इत्यादि दलित पात्रों का उल्लेख मिलता है। प्रस्तुत उपन्यास में शिक्षा के प्रति लोगों में चेतना अधिक दिखाई देती है।

निष्कर्ष :-

प्रस्तुत पंचम अध्याय ''हिन्दी उपन्यासों में चित्रित दलित चेतना'' के अंतर्गत दलित जीवन और परिवर्तित जीवन के साथ दलितों में उत्पन्न चेतना जागृति पर सोचा है। इसके अंतर्गत चेतना की उत्पत्ति और अर्थ, चेतना का निर्माण, दलितों में चेतना निर्मिती के कारण, दलित जागरण का कार्य, डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर, महात्मा गांधी, महात्मा फुले, महर्षि कर्वे आदि का दलितोद्धार का कार्य, दलित चेतना की आवश्यकता के साथ-ही-साथ 'खारे जल का गांव', 'धरती धन न अपना', 'मोरी की ईंट', 'एकलव्य' और 'आग-पानी आकाश' आदि उपन्यासों में चित्रित दलित चेतना आदि पर विचार किया हैं।

दलित आधुनिक समाज का एक अभिन्न अंग है। आज का दलित परंपरागत जीवन की अपेक्षा परिवर्तित जीवन जी रहा है। भौतिक विकास के साथ अपना जीवन सम्पन्न करने वाला 'दलित' विद्रोही बन रहा है। सरकारी विकास योजना, शिक्षा प्रसार, संविधान की सहायता,आरक्षण, समाज सेवी संस्था और समाज सेवी व्यक्ति के कार्य के परिचय स्वरूप हरिजनों में चेतना उत्पन्न हो रही हैं।

चेतना एक ऐसी शक्ति है जो दलितों में अन्याय के खिलाफ संघर्ष करने की प्रेरणा देती है। समाज में जागृति, आत्मभाव, चैतन्य, पौरूषत्व की भावना पैदा करने वाली धारा 'चेतना' ही है। आज का दलित परंपरागत रूप में शोषित दास ही रहा हैं, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक चेतना और परिवर्तन के कारण दलितों में विद्रोह की भावना पनपने लगी, सामाजिक क्रांति को बल देने का कार्य चेतना करती है।

हिन्दी उपन्यासकारों ने अपनी रचनाओं में दलित चेतना का यथार्थ चित्रण किया है। जाति व्यवस्था का विरोध करके सामाजिक समता का प्रचार किया। यह सच है कि जब तक दलित शिक्षित नहीं था,तब तक उनका शोषण हो रहा था। आज शिक्षा प्रसार, अनिवार्य और मुफ्त शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा प्रसार आदि के कारण दलित समाज शिक्षित हो रहा है परिणामत: उनकी चेतना उत्पन्न हो रही है। मानवता की स्थापना करने का कार्य साहित्य कर रहा है। संगठन का महत्व जानने वाला दलित संगठित हो रहा है। उसका चिंतन साहित्य में हुआ है। नवजागरण काल, समाजसुधारकों का कार्य, महात्मा गांधी, महात्मा फुले, छ. शाहू, डॉ. आंबेडकर, महर्षि कर्वे आदि ऐसे अनेक समाज सुधारकों ने कार्य किया, परिणामत: शोषित, अछूत, अपमानित दलित जाग उठा।

आजादी के पश्चात भारत सरकार ने विकास योजनाओं के सहारे दलितोद्धार का कार्य शुरू किया। कुटीर उद्योग, कृषि में विकास की योजनाएं बनाई। ग्रामजीवन विकसित हुआ, साथ-ही-साथ दलित जीवन में सम्पन्नता आयी।

दलितों में नवजागरण, नवचेतना निर्माण करने का कार्य संत, महंत, समाज सेवक,समाज सेवी संस्था आदि ने किया। सभी समस्याओं में शोषण, अंधविश्वास ही प्रधान समस्या है। उसके मूल में अज्ञान ही है। इस पर सभी ने बल दिया और उसके अनुसार कार्य किया।

डॉ.बाबासाहब आम्बेडकरजी ने 'शिक्षित बनो, संगठित बनो, संघर्ष करो' यह नारा देकर, धर्म परिवर्तन करके दलितों को संगठित किया। आजादी के पश्चात राजनीतिक स्तर दलित जागरण का कार्य किया। महात्मा गांधीजी ने 'हरिजन' कहकर दलितों की महत्ता स्पष्ट की तो महात्मा फुले ने दलितों के साथ-ही-साथ नारी शिक्षा पर बल दिया। 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना करना महत्वपूर्ण घटना थी तो महर्षि कर्वेजी ने 'समता संघ' की स्थापना करके दलित चेतना का कार्य किया।

आजादी के पश्चात 'एक पनघट, एक गांव' शिक्षा व्यवस्था, छात्रावास, छात्रवृत्ति में समता की विचारधारा प्रवाहित हो गयी। अस्पृश्यता के खिलाफ कानूनी कार्यवाही होने लगी। परिणामत: जातीयता के बंधन टूटने लगे। दलित संगठन, दलितों का राजनीति में प्रवेश, सामाजिक दलों का सहयोग और नेतृत्व ने दलितों में चेतना जगायी। यही चेतना दलित उद्धार का कारण बनी।

हिन्दी उपन्यासकारों ने अपनी कृतियों में दलित चेतना को वाणी दे दी। 'खारे जल का गांव' का अरविन्द, सुग्रीव, जमुना मास्टर, चनकी चेतित पात्र हैं। चमरहटी में शिक्षा केंद्र शुरू करना, उपभोक्ता भांडार का उद्‌घाटन एक चमार के हाथों से करना, 'क्रांतिकारी मोर्चा' का आयोजन करना, अरविन्द द्वारा चुनाव लड़ना, मंदिर में जातीयता मानने का सुग्रीव द्वारा विरोध होना, पुलिस अत्याचार के खिलाफ सुग्रीव द्वारा फटकारना, चनकी द्वारा अत्याचारी जमींदार की खाल उतारना आदि कई घटनाएं दलित चेतना को दर्शाती हैं। दलितों को संगठित बनानेवाला अरविन्द महत्वपूर्ण पात्र है। तो जातीयता का विरोध करने वाला मास्टर जमुना समाज व्यवस्था में परिवर्तन लाना चाहता है।

'धरती धन न अपना' का काली अपना मकान बनानेवाला शिक्षित पात्र है। मंगू चमार की बहिन ज्ञानो जमींदार को गालियाँ देकर अपना विरोध प्रकट करती है। गालियाँ देने वाले चौधरी को काली अपनी अस्मिता को याद दिलाता है। मदन दीक्षित ने 'मोरी की ईंट' में मेहतर संघ की स्थापना करना, मेहतरों में उत्पन्न चेतना को दर्शाने वाली एक अपने आप में महत्वपूर्ण घटना है। शराबी पति का बोझ स्वयं उठाने वाली कामकाजी दलित नारी के रूप में मंगिया का महत्वपूर्ण स्थान है। यहाँ की मंगिया अबला न होकर सबला लगती है। मेहतरलोग अपने संगठन के बलपर अपने ऊपर होने वाले अन्याय का प्रतिरोध करते हैं।

'एकलव्य' का एकलव्य दलित युवा का पथदर्शक लगता है। कड़ी मेहनत और लगन से कोई कार्य किया जाय तो सफलता चरण चूमती है यही उसका संदेश है। जाति व्यवस्था, शिक्षा व्यवस्था में जातीयता को महत्व देने वाले आचार्य द्रोण को फटकारने वाला एकलव्य अपनी गुरूनिष्ठा भी दिखाता है। पाप-पुण्य की परिभाषा करने का कार्य उपन्यासकार ने किया है। अर्थात महाभारत की कथा होकर भी आज की स्थिति में यथार्थ लगती है। आधुनिक युग में भी शिक्षा व्यवस्था में जातीयता के प्रचारक द्रोणाचार्य और पीड़ित एकलव्य के दर्शन होते हैं। इसी कारण पर उपन्यास दलित चेतना की दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा है।

आज का पढ़ा लिखा दलित अपनी जाति को भूल बैठा है। नगरों में रहने वाला दलित, उच्च पद पर कार्य करने वाला दलित ग्रामवासियों, दलितों को पहचानता नहीं। यह एक नई जातीय व्यवस्था निर्माण हो रही है। इस पर प्रकाश डालने का कार्य 'आग-पानी आकाश' में रामधारीसिंह दिवाकर जी ने युगेश्वर और भागवत के माध्यम से किया है। शिक्षित दलित अपने जाति का उद्धार करे, यही आशावादी स्वर यहाँ रहा है।

अत: स्पष्ट है सन् 1970 के आस-पास के उपन्यास में दलित का शोषण अधिक हो रहा है परंतु सन् 1990 के पश्चात लिखे उपन्यासों में चेतना का बहुआयामी विकास दिखाई देता है। अब दलित शिक्षित होकर संगठित हो रहा है, संगठन के बल पर राजनीति में अपना स्थान प्राप्त कर रहा है ऐसा लगता है। सरकारी सेवा करके भौतिक विकास से लाभान्वित होने वाला दलित नयी समाज व्यवस्था में अपना सहयोग दे रहा है ऐसा लगता है।

साहित्यकारों ने परिवर्तित दलित जीवन, दलित जीवन में उत्पन्न होने वाली नयी समस्याएं, सामाजिक व्यवस्था में उनका होने वाला प्रभाव आदि को यथार्थ संदेश चित्रित किया है। अत: लगता है सन 1970 के पश्चात लिखे उपन्यासों में चेतित और जागृत दलित का यथार्थ चित्रण हुआ है। दलितों में उत्पन्न चेतना, नई विचारधारा नये समाज व्यवस्था का प्रमाण ही है। अर्थात सामाजिक क्रांति का यही प्रतीक है।

संदर्भ सूची :-

1) गो. प. नेने, श्रीपाद जोशी, "बृहद् मराठी - हिन्दी शब्दकोश", प्र.स.1971, संगम प्रेस, पुना, पृ.314
2) गो. प. नेने, श्रीपाद जोशी, "बृहद् मराठी - हिन्दी शब्दकोश", प्र.स.1965, संगम प्रेस, पुना, पृ.239
3) अरविन्दकुमार, "समान्तरकोश थी सारस", 1997, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, दिल्ली, पृ.969
4) ब्रज मोहन, "हिन्दी अंग्रेजी कोश", प्र.सं.1980, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृ.239
5) संपादक, नगेन्द्रनाथ बसु, "हिन्दी शब्दकोश - सप्तम भाग", 1986, बी. आर. पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ.488
6) डॉ. काशीनाथ अम्बलेगे, "संतों और शिवशरणों के काव्यों में सामाजिक चेतना", प्र.स.1990, अन्नपूर्ण प्रकाशन, कानपुर, पृ.17
7) नया माप दण्ड, "त्रैमासिक अक्टूबर-दिसंबर - 1999", पृ.1
8) डॉ. देवेश ठाकुर, "साहित्य की सामाजिक भूमिका", प्र.सं.1989, अरविन्द प्रकाशन, मुंबई, पृ.14
9) डॉ. मोहनलाल कपूर, "हिन्दी उपन्यासों में चेतना प्रवाह पद्धती", 1988, साकेत समीर प्रकाशन, दिल्ली, पृ.1 से 3 तक
10) डॉ. दयानंद बटोही, "साहित्य और सामाजिक क्रांति -2001", अतिश प्रकाशन, दिल्ली, पृ.33
11) हंस पत्रिका, "जनवरी - 1999', पृ.150
12) राहुल सांकृत्यायन, "जय यौधेय", 1967, किताब महल, इलाहाबाद, पृ.206
13) आनंद यादव, "1960 नंतरची सामाजिक स्थिति आणि साहित्यकालीन नवे प्रवाह", 2001, मेहता पब्लिशिंग हाऊस, पुणे, पृ.9
14) संपादक - डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी, "हिन्दी दलित साहित्य : रचना और विचार", 2001, अतिश प्रकाशन, दिल्ली, पृ.31
15) रिसर्च जनरल, "जनवरी-जून 2002 - आठवां अंक", रयत शिक्षण संस्था, सातारा, पृ.15
16) डॉ. रघुबीर सिंह, "डॉ.अम्बेडकर और दलित चेतना", 1999, कामना प्रकाशन, दिल्ली, पृ.75
17) डॉ. आनंद वास्कर, "हिन्दी साहित्य में दलित चेतना", प्र.स.1987,विद्या प्रिंटर्स, कानपुर, पृ.63
18) डॉ. बलवन्त साधू जाधव, "प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना", प्र.स.1992, अल्का प्रकाशन, कानपुर, पृ.41
19) डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल, "खारे जल का गांव", 1972, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.76
20) वही, पृ.85
21) वही, पृ.14
22) वही, पृ54
23) जगदीश चंद्र, "धरती धन न अपना", 1981, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.24

24) वही, पृ.27

25) वही, पृ.174

26) वही, पृ.235

27) मदन दीक्षित, "मोरी की ईंट", 1996, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, पृ.13

28) चंद्रमोहन प्रधान, "एकलव्य", 1997, अनुराग प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ122

29) वही, पृ.141